ISSN 2581-8163

ANVEEKSHA RESEARCH JOURNAL OF SSKGDC

(A Peer Reviewed Journal)

SKGDC

SADANLAL SANWALDAS KHANNA GIRLS' DEGREE COLLEGE, PRAYAGRAJ

(A Constituent PG College of University of Allahabad)

Accredited 'A' Grade by NAAC

Scanned with OKEN Scanner

ANVEEKSHA RESEARCH JOURNAL OF SSKGGC

(A Peer reviewed Interdisciplinary Journal)

Editor

Prof. Lalima Singh, Principal

Editorial Board

- Dr. Meenu Agrawal
- Dr. Rachana Anand Gaur
- Dr. Manjari Shukla
- Dr. Harish Kumar Singh
- Dr. Shep Shankar Srivastava
- Dr. Ruchi Malviya
- Dr. Riya Mukherjee
- Dr. Saumya Krishna
- Dr. Nishi Seth
- Dr. Jyoti Baijal
- Dr. Tanushree Roy
- Dr. Ravi Kant Singh

VOL 5 ISSUE 1 2022 ISSN 2581-8163

SADANLAL SANWALDAS KHANNA GIRLS' DEGREE COLLEGE, PRAYAGRAJ

(A Constituent PG College of University of Allahabad)

(Accredited "A" Grade by NAAC)

Anveeksha Research Journal of SSKGDC

अनुक्रम

S. No.	Title		Page No.
1.	From the desk of the Editor	Prof. Lalima Singh	1
2.	अन्वीक्षा : अन्तर्दृष्टि	डॉ. मंजरी शुक्ला	3
3.	राजनांदगाँव जिले के शिल्पकला में अंकित रामकथा	प्रो. आर.एन. विश्वकर्मा	4
4.	संस्कृत वाङ्मय की विकास यात्रा में पद्मश्री डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी का योगदान	डॉ. प्रभात कुमार सिंह	10
5.	एरच से प्राप्त क्षतिपूर्ति विभाग के अमात्य का मृण्मुद्रांक	डॉ. ओ.पी.एल. श्रीवास्तव	17
6.	लोकमंगल की अवधारणा और आचार्य रामचंद्र शुक्ल	डॉ. अखिलेश कुमार शंखधर	19
7.	प्रेमचंद की कहानियों में मानवीय संवेदना	डॉ. सुरेन्द्र विक्रम	25
8.	हिन्द स्वराज : उपनिवेशवादी मानसिकता और गाँधी का स्वप्न	डॉ. आभा त्रिपाठी	33
9.	'हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास' और स्त्री इतिहास दृष्टि	डॉ. वीरेन्द्र कुमार मीना	42
10.	उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रभाव और हिंदी भाषा का बदलता स्वरूप	डॉ. उर्वशी	56
11.	छायावाद कालीन काव्य–समीक्षा में कला–चिन्तन और अभिव्यंजनावाद	डॉ. हेमराज डोगरा	66
12.	नवजागरण और स्त्री प्रश्न	डॉ. दीपक सिंह	82
13.	सूर्य आत्मा जगतस्थस्थुषश्च	डॉ. आशुतोष द्विवेदी	91
14.	The Revival of Buddhism in India in the 20th Century(An Evaluation of The Efforts of Dr. B.R. Ambedkar)	Dr. Aparana	98

Scanned with OKEN Scanner

नवजागरण और स्त्री प्रश्न

डॉ. दीपक सिंह
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अम्बिकापुर जिला–सरगुजा (छ.ग.)

नवजागरण उन्नीसवीं सदी की एक प्रमुख परिघटना थी। इस नवजागरण के दौरान भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक बुराइयों को दूर करने के अनेक प्रयास किये गए। इन सामाजिक बुराइयों में ज्यादातर स्त्री के जीवन से सीधे–सीधे जुडीं थीं इसलिए नवजागरण के दौरान स्त्री की सामाजिक स्थिति पर एक नए ढंग से सोचने–समझने की आवश्यकता महसूस की गई। सती प्रथा, बाल–विवाह, विधवा–विवाह, बेमेल–विवाह, स्त्री शिक्षा, पर्दा प्रथा आदि ऐसे प्रश्न थे जो सीधे स्त्री जीवन से जुड़े थे।

सती प्रथा भारतीय समाज में व्याप्त एक ऐसी बुराई थी जिसमें पति की मृत्यु के बाद पत्नी को उसकी चिता के साथ जिंदा जलना पड़ता था। इसको महिमामंडित इस तरह से किया गया था कि स्त्री अपने पातिव्रत्य का प्रमाण प्रस्तुत करते हुए स्वेच्छा से इस प्रथा को स्वीकार करती है, किन्तु इसकी वास्तविकता यह थी कि जबरदस्ती स्त्रियों को पति की चिता पर बैठा दिया जाता था। स्त्री जीवन की दूसरी समस्या बाल–विवाह ने इस समस्या को और विकराल बना दिया था। कई बार वे नन्हीं बालिकाएं जो पति और पातिव्रत्य का अर्थ तक नहीं समझती थीं, इस कुप्रथा की भेंट चढ़ जाती थीं। नवजागरण के अग्रदूत कहे जाने वाले राजा राम मोहन राय ने इस दिशा में उल्लेखनीय प्रयास करते हुए ब्रिटिश गवर्नर लार्ड विलियम बेंटिक के सहयोग से सती–प्रथा पर पूर्णतः रोक लगवाई तथा इसके खिलाफ बाकायदा एक कानून पास करवाने में सफलता प्राप्त की।

बाल–विवाह, विधवा–विवाह तथा बेमेल–विवाह ये तीनों कुरीतियाँ एक दूसरे से जुडी हुई थीं। बाल–विवाह का परिणाम अक्सर बेमेल–विवाह होता था क्योंकि माता–पिता अपनी कम उम्र की बालिकाओं का विवाह उनसे दुगुने उम्र के पुरुष के साथ कर दिया करते थे। वे बच्चियां जिनका विवाह कम उम्र में कर दिया जाता था, उनको कई बार वैधव्य का दंड भी झेलना पड़ता था। सच बात तो यह है कि उनको विवाह का मतलब भी नहीं पता था और विधवा होने के कष्ट से भी उनका कोई परिचय नहीं था लेकिन उन्हें समाज में विधवाओं के लिए बनाए गए कठिन नियमों का पालन करना पड़ता था। नवजागरण के दौरान जब समाज सुधारकों ने समाज की विभिन्न

Scanned with OKEN Scanner

कुरीतियों पर विचार किया तो स्त्री जीवन की यह समस्या केंद्र में आई। जिसके पश्चात बाल–विवाह पर रोक लगाई गई तथा विधवाओं के पुनर्विवाह को कानूनी मान्यता प्राप्त हुई ।

दरअसल स्त्री जीवन से जुड़ी इन तमाम समस्याओं के मूल में स्त्री को शिक्षा के अधिकार से वंचित रखना एक प्रमुख कारण था। भारतीय समाज में स्त्री का पूरा जीवन विवाह के इर्द–गिर्द केन्द्रित था। उसके पैदा होने के साथ ही विवाह की समस्या उससे जुड़ जाती थी। स्त्री–जीवन की सम्पूर्ण गति, नियति विवाह के परिणाम पर ही निर्भर करती थी। स्त्रियों के जीवन के सभी कार्यकलाप पुरुष पर आश्रित और केन्द्रित थे। नवजागरण के दौरान पहली बार स्त्री को एक स्वतंत्र अस्तित्व के रूप में या यों कहें कि मनुष्य के रूप में देखने–समझने की आवश्यकता महसूस की गई। इसी का परिणाम था कि हमारे सुधारकों का ध्यान स्त्री को शिक्षित करने की ओर गया। देश के अलग–अलग हिस्सों में लड़कियों के लिए अनेक स्कूल खोले गए तथा सुधारकों ने लड़कियों को स्कूल भेजने के लिए घर–घर जाकर प्रचार–प्रसार भी किया। इस कार्य के लिए स्वामी दयानंद सरस्वती ने वेदों और उपनिषदों से स्त्री शिक्षा का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए उन तमाम लोगों को जवाब भी दिया जो स्त्री–शिक्षा के विरोध में थे। इस दृष्टि से सावित्री बाई फुले का योगदान अविस्मरणीय है जिन्होंने समाज के तमाम विरोधों को झेलते हुए भी स्त्री–शिक्षा के अपने प्रण को नहीं छोड़ा और निम्नवर्गीय स्त्रियों की शिक्षा के लिए लगातार प्रयत्नशील रहीं।

नवजागरण के परिणामस्वरूप ही हिन्दी में भी स्त्री–केन्द्रित अनेक पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ तथा स्त्री जीवन की पीड़ा को धारावाहिक तरीके से इन पत्रिकाओं में दर्ज किया गया। बालाबोधिनी, स्त्री–दर्पण, चाँद आदि प्रमुख पत्रिकाएँ थीं जो पूर्णतः स्त्री जीवन पर केन्द्रित थीं। इसके साथ ही साहित्य की विषयवस्तु में भी व्यापक बदलाव हुआ तथा स्त्री जीवन के विभिन्न पीड़ादायक चित्र साहित्य की विषयवस्तु बने।

इस तरह से हम देखें तो कह सकते हैं कि नवजागरण के दौरान पहली बार स्त्री की एक मनुष्य के रूप में पहचान की गई तथा उसके जीवन पर विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार–विमर्श किया गया। नवजागरण के सभी समाज–सुधारकों ने यह बात गहराई से महसूस की कि स्त्री–जीवन में सुधार के बिना किसी भी तरह के समाज–सुधार की कल्पना नहीं की जा सकती।

इन सब सुधारों के परिणामस्वरूप स्त्री–जीवन के वास्तविक स्वरूप में कितना और कैसा परिवर्तन आया इस पर विद्वानों की अलग–अलग राय है और वह वाजिब भी है लेकिन इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि स्त्री शिक्षा का केंद्र में आना नवजागरण का हासिल है। बाद के विभिन्न स्त्री–अध्येताओं ने नवजागरण के इन तमाम सुधारों पर इस आधार पर सवाल खड़ा किया कि ये सभी सुधार उच्च वर्गीय समाज तक ही सीमित थे तथा निम्नवर्गीय स्त्रियों की स्थिति में इनसे कोई परिवर्तन नहीं आया,

Scanned with OKEN Scanner

बल्कि उन्होंने निम्नवर्गीय स्त्रियों के लिए अलग तरह की समस्याएं ही खड़ी कीं। साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि जिन समस्याओं को नवजागरण के दौरान उठाया गया, वे सभी समाजों में एक तरह से नहीं थीं।

नवजागरण के महत्व को स्वीकार करते हुए यह भी नहीं भूलना चाहिए कि उसका स्त्री विषयक चिन्तन व सुधार का नजरिया पूर्णतः पुरुषवादी था, बाद के विद्वानों ने इस पर अलग–अलग तरह से अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। स्त्री–जीवन में सुधार की यह सारी संकल्पना उस भारतीय समाज में सुधार से जुडी हुई थी, जो रूढ़ियों और कुप्रथाओं में बुरी तरह जकड़ा हुआ था। स्त्री–जीवन में किये गए सुधारों को जब हम इस रोशनी में देखते हैं तो नवजागरण की सच्ची तस्वीर सामने आती है। प्रो0 सुधा सिंह नवजागरण के नजरिये पर सवाल खडा करती हैं –"यहाँ स्त्री केंद्र में नहीं है बल्कि हिन्दू समाज की सड़ी दशा को सुधारने के लिए और समाज को बदलते समय के अनुकूल ढालने के लिए, स्त्रियों की अमानवीय स्थिति को दुरुस्त करने का प्रयास है। तत्कालीन समाज में स्त्रियों में व्याप्त परदा–प्रथा, अशिक्षा, अन्धविश्वास, बाल–विवाह, विधवा–विवाह का निषेध, सती–प्रथा का चलन आदि कुरीतियों का नवजागरण के प्रसंग में जिक्र करने के साथ यह ध्यान रखना चाहिए कि ये सब कुरीतियाँ स्त्रियों में स्वतःस्फूर्त नहीं 'व्याप' गई थीं, बल्कि इनके लिए समाज में मजबूत आधार व्याप्त था। नवजागरण के पुरोधाओं ने इन सब कुरीतियों के आर्थिक आधारों को कभी चुनौती नहीं दी। समाज में अमानुषिक स्थितियों में जी रही स्त्री को समाज से प्रतिष्ठा और प्रशंसा तभी प्राप्त हो सकती थी जब वह उपरोक्त प्रथाओं के आधार पर कठोर संयम और कुरीतियों से जकड़ कर जीना सीख ले।"[1]

विवाह भारतीय समाज में एक अनिवार्य आवश्यकता मानी जाती है, इसीलिये बाल–विवाह, बेमेल–विवाह और विधवा पुनर्विवाह जैसे मुद्दे नवजागरण के केंद्र में आये। ये तीनों ही मुद्दे एक–दूसरे से जुड़े हुए थे। बचपन में किये जाने वाले विवाह अक्सर बेमेल विवाह होते थे और विधवा होने की स्थिति ज्यादातर इसी कारण उपस्थित होती थी। स्त्री एक वस्तु के रूप में व्यवहृत होती थी जिसका एक–परिवार से दूसरे परिवार में लेन–देन किया जाता था। लेन–देन की इस प्रथा का प्रमाण चाँद पत्रिका में 'कौशिक' नाम के सज्जन के 'विवाह या सर्वनाश' शीर्षक से लिखे गए लेख से मिलता है। इसमें वह मथुरा की एक घटना का उल्लेख करते हैं जिसमें छः महीने की बच्ची का विवाह किया जा रहा था। वहाँ मौजूद लोगों से जब कौशिक जी ने इस घटना की सच्चाई पता की, तो पता चला कि ऐसे विवाह यहाँ आम हैं, जो 'बदलुआ' कहलाते हैं। इसका अर्थ यह था कि अगर एक घर में लड़की और एक लड़का हुआ और दूसरे में भी एक लड़की और एक लड़का तो वे इनका विवाह अदले–बदले में कर लेते हैं।

जिस समाज में स्त्री की यह स्थिति थी कि विवाह जीवन का एकमात्र लक्ष्य हो गया हो उस समाज में सुधार की थोड़ी नहीं बहुत आवश्यकता थी और आज भी है। उस समय की विभिन्न पत्रिकाओं से इस बात का प्रमाण मिलता है कि विधवा के पुनर्विवाह की जो

Scanned with OKEN Scanner

बात की गई, वह इसलिए कि वे विधवाओं को कुमार्ग पर जाने से बचाना चाहते थे। यह कहा गया कि विधवाओं के कुमार्ग पर जाने से इस समाज का पतन हो रहा है इसलिए उनका विवाह करा देना आवश्यक है। उस विवाह के बाद उनकी क्या स्थिति होगी, इस सब पर बहुत सोचने–विचारने की आवश्यकता नहीं महसूस की गई। विधवा–पुनर्विवाह को लेकर अनेक मत समाज में प्रचलित थे। जहाँ मुखर रूप में ज्यादातर लोग विधवा–विवाह की आवश्यकता को महसूस कर रहे थे वहीं छिपे स्वरों में उस पर सवाल भी खड़े कर रहे थे। एक मामला क्षत योनि और अक्षत–योनि को लेकर था। कुछ लोगों का यह मानना था कि उन्हीं विधवाओं का विवाह कराया जाना चाहिए। जिनका उनके पति से कोई संपर्क नहीं हुआ था। एक दूसरा विचार यह था कि विधवा हिन्दू स्त्रियों को मुसलमान बनाए जाने की कोशिशें की जा रही हैं इसलिए इन विधवाओं का विवाह करा देना ही एकमात्र उपाय है। इसी के साथ यह बात भी जोड़ी गई कि काम का उद्दाम आवेग उन्हें वेश्यावृति की ओर धकेलता है इसलिए विवाह कर गृहस्थ्य जीवन में उनका प्रवेश करा देना हिन्दू धर्म की सुरक्षा की दृष्टि से श्रेयस्कर है। नवजागरण कालीन प्रमुख स्त्री पत्रिका चाँद के संपादक श्रीयुत रामरख सिंह सहगल हिन्दू विधवाओं के दूसरे धर्मों में जाने की अपनी चिंता का इजहार इन शब्दों में करते हैं– "अधिकांश हिन्दू विधवाएं हिन्दू–समाज के मस्तक को नीचा करने के लिए पर्याप्त साधन हैं, और यदि हिन्दू समाज शीघ्र ही अपनी स्थिति में परिवर्तन नहीं करता, तो वह दिन दूर नहीं, जबकि हमारे घरों की अधिकांश बहू–बेटियाँ हमारे मुंह में कालिख पोत कर लाखों की संख्या में कलमा पढ़ते अथवा बप्तिस्मा लेते पाई जायेंगी।"[2]

सहगल जी एक और जगह कहते हैं "उच्च–उच्च हिन्दू घराने की बहू–बेटियाँ काम के उद्दाम परिपीडन से आज भारतवर्ष के प्रत्येक छोटे से लेकर बड़े–बड़े शहरों में, लाखों की संख्या में वेश्या और विधर्मिनी बनकर, प्रति वर्ष ऐसे असंख्य बच्चों को पैदा करती हैं, जिनका एक मात्र उद्देश्य हिन्दू–धर्म की पवित्र नींव को खोद, हिन्दू जाति के विशाल अस्तित्व को मिटाना ही है।"[3]

सहगल जी के इन विचारों से हम यह अंदाजा लगा सकते हैं कि विधवा–विवाह की अवश्यकता क्यों महसूस की गई। इतना ही नहीं चाँद जैसी उपयोगी पत्रिका के सम्पादक होने के बावजूद उन्हें यह सफाई देनी पड़ती है कि इस पत्र को विधवा–समर्थक पत्र न समझा जाय। चाँद पत्रिका पर लगे आक्षेप का जवाब देते हुए वे लिखते हैं –"पत्रिका का आदर्श विधवा–विवाह नहीं है। कोई भी समझदार मनुष्य विधवा–विवाह को अपना आदर्श नहीं समझ सकता। कोई भी यह कहने का साहस न करेगा कि विधवा का विवाह अवश्य करना चाहिए।"[4]

आगे वे लिखते हैं –"विधवा–विवाह को तो हम हृदय से धिक्कारते हैं, किन्तु जिस परिस्थिति में आज हमारा समाज जकड़ा हुआ है और विधवाओं द्वारा समाज में जो–जो अनर्थ उपस्थित हो रहे हैं उन्हें समाज सुधारक की हैसियत से, हम उपेक्षा की दृष्टि से

Scanned with OKEN Scanner

कदापि नहीं देख सकते।"[5]

इस उद्धरण से इस बात को समझा जा सकता है कि उस समय जो विधवाएं विवाह के लिए तैयार होती थीं उन्हें किन नजरों से देखा–जाता रहा होगा। इसी तरह से कुछ लोग ऐसे भी थे जो उस समय भी स्त्री के लिए पतिव्रत धर्म को सबसे बड़ा धर्म समझते थे और इसमें पुरुषों के साथ स्त्रियाँ भी शामिल थीं। इसी पत्र में कुछ महिलायें भी इस बात को लिख रहीं थी कि यदि महिलायें थोड़ी पढी–लिखी होंगी तो वे अपने पातिव्रत धर्म का महत्व समझ पाएंगी तथा स्वयं विधवा–पुनर्विवाह जैसे घृणित कार्य की ओर नहीं जायेंगी। लेखिका धर्मपत्नी पंडित विश्वेश्वर दयालु जी चतुर्वेदी के नाम से एक आदरणीया लिखती हैं – "बहनों को उनके धर्म के अनुसार शिक्षा देने और पूर्ण अवस्था होने पर विवाह करने से फिर पुनर्विवाह का प्रश्न ही न रह जाएगा क्योंकि एक तो विधवाएं कम होंगी और दूसरे वे अपने धर्म तथा कर्तव्य से परिचित होंगी। अपने आदर्श पातिव्रत धर्म की प्राण रहते रक्षा करेंगी और जो कोई मनुष्य उनकी तरफ कुदृष्टि से देखेगा उसे पूर्ण दंड देंगी, मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार तो पुनर्विवाह की अपेक्षा विधवाओं को शिक्षा देना, उनको धार्मिक बनाना और बाल–विवाह को मिटा देना कहीं अच्छा है, पुनर्विवाह का शब्द सुनना और अपनी बहनों को पुनर्विवाह करते सुनने और देखने तक से स्त्रियों को लज्जा आती है और उनके कोमल हृदय में अत्यंत चोट पहुँचती है। ऐसी कौन सी सती बहन होगी जो अपनी बहनों का आदर्श गिरते देखकर खेद न करे। हमारे प्यारे पतिव्रत धर्म की महिमा अमूल्य है और उसकी रक्षा करना प्रत्येक बहन का कर्तव्य होना चाहिए।"[6]

इस तरह के विचार इस बात को स्पष्ट करते हैं कि पढ़े–लिखे लोगो के बीच भी विधवा–विवाह को अच्छा नहीं समझा जाता था। वास्तव में नवजागरण में जिस विधवा–विवाह को एक महत्वपूर्ण सुधारात्मक कदम के रूप में प्रस्तुत किया गया था उसकी असली तस्वीर यही थी। भारत के सभी प्रान्तों और जातियों में विधवा–विवाह की समस्या एक जैसी नहीं थी। यह मूलतः उच्च वर्ग की समस्या थी, ठीक उसी तरह जिस तरह सती–प्रथा की समस्या।

नवजागरण की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में स्त्री–शिक्षा को देखा जाता है। यह बात सत्य है कि नवजागरणकालीन लगभग सभी सुधारक स्त्री को शिक्षा दिए जाने के मामले में एकमत थे, किन्तु इसके स्वरूप को लेकर पर्याप्त मतभिन्नता थी। एक मत यह था कि स्त्रियों को पश्चिमी शिक्षा से दूर रखा जाना चाहिए और जितना संभव हो सके धर्म और नैतिकता की शिक्षा दी जानी चाहिए। वीरभारत तलवार ने अपनी किताब रस्साकशी में हंटर आयोग द्वारा भारतेंदु से स्त्री–शिक्षा के विषय में बात–चीत का हवाला दिया है जिससे पता चलता है कि भारतेंदु स्त्री और पुरुष के लिए अलग–अलग शिक्षा देने के हिमायती थे। भारतेंदु द्वारा दिया गया जवाब जिसका उल्लेख डॉ वीरभारत तलवार ने किया है, वह इस प्रकार है "मैं मिस रोज ग्रीनफील्ड से पूरी तरह सहमत हूँ

Scanned with OKEN Scanner

कि बड़ी लड़कियों को प्रेमसागर (लल्लूलाल का बनाया) ग्रन्थ पढ़ने के लिए नहीं देना चाहिए। विद्यांकुर और इतिहासतिमिरनाशक उनके नैतिक चरित्र का विकास नहीं कर सकते। चरित्र निर्माण (मोरालिटी) और घरेलू प्रबंध वगैरह के बारे में बताने वाली अच्छी पाठ्यपुस्तकें उनके पाठ्यक्रम में लगानी चाहिए।"[7]

आगे भारतेंदु ने सहशिक्षा को भी भारतीय समाज के लिए असंभव बताया, जबकि भारतेंदु हिंदी क्षेत्र में नवजागरण के अग्रदूत कहे जाते थे। जिस तरह से भारतेंदु जैसे बड़े कवि और समाजसुधारक स्त्री शिक्षा के मामले को एक पवित्र वस्तु मानकर चल रहे थे उसी तरह का विचार नवजागरण कालीन स्त्री पत्रिकाओं में भी व्यक्त हो रहा था। इस बात पर भी जोर दिया गया कि नई शिक्षा–व्यवस्था हमारी लड़कियों को धर्म से विरत कर सकती है इसलिए ऐसी शिक्षा की व्यवस्था किये जाने की जरूरत है जो उन्हें पातिव्रत धर्म से लेकर परिवार और गृहस्थी की शिक्षा दे सके। स्त्रियों को धर्म और नैतिकता की शिक्षा पर जोर दिये जाने के पीछे ईसाई मिशनरियों द्वारा भारत में शिक्षा, खास–तौर से स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में किये जाने वाला प्रयत्न भी एक बड़ा कारण था। भारतीय धर्म–सुधारकों को डर था कि यदि भारतीय लड़कियाँ ईसाई मिशनरियों में शिक्षा प्राप्त करने गईं तो वे अपने हिन्दू धर्म से विमुख हो जायेंगी। चूंकि भारतीय समाज में धर्म–पालन की एक महती जिम्मेदारी महिलाओं के ऊपर ही निर्भर करती है इसलिए यह डर स्वाभाविक था। हम जानते हैं कि नवजागरण से पूर्व भारतीय पुरुषों को पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त करने की पूरी छूट थी लेकिन तब कभी भी यह सवाल नहीं उठाया गया कि पुरुषों के पाश्चात्य शिक्षा ग्रहण करने से हमारा धर्म खतरे में पड़ जायेगा। डॉ वीरभारत तलवार लिखते हैं "भारतीयों के लिए स्त्रियाँ उनका वैसा ही पवित्र मामला था, जैसे उनका धर्म। इसमें कोई बाहरी दखल नहीं दे सकता था। अंग्रेजों के आने से ठीक पहले स्त्रियाँ न सिर्फ संस्कृत में, बल्कि लोकभाषाओं में भी शिक्षा नहीं पा सकतीं थीं। हिन्दी भाषा और नागरी लिपि का आन्दोलन चलाने वाले कट्टर वैष्णव समाज–सुधारक मदन मोहन मालवीय (जो शुरू में विधवा–विवाह और स्त्रियों के वोट देने के अधिकार के भी विरोधी थे) के काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के वेद–विभाग में 20वीं सदी में भी दशकों तक स्त्रियों को वेद–अध्ययन का हक नहीं था। स्त्री शिक्षा का सवाल भारतीय समाज का एक ऐसा अंतर्विरोध था जो भारतीयों के निजी प्रयत्नों के बिना, सिर्फ विदेशी सरकार के हस्तक्षेप से कभी हल नहीं हो सकता था।"[8]

शायद यही कारण है कि भारत के विभिन्न प्रान्तों में स्त्री–शिक्षा के लिए निजी तौर पर प्रयत्न किये गए। ईश्वरचंद विद्यासागर से लेकर जे.ई.डी.बेथुन, द्वारिकानाथ गांगुली, लाला देवराज, ज्योतिबा फुले तथा सावित्री बाई फुले जैसे अनेक सुधारकों ने इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किये। हिन्दी की प्रमुख स्त्री पत्रिकाओं में जिस तरह के आलेख लिखे जा रहे थे उससे भी इस बात का अंदाजा लगाया जा सकता है कि उस समय तक स्त्री–शिक्षा और पुरुष–शिक्षा दोनों के लिए अलग–अलग पाठ्यक्रमों की बात की

Scanned with OKEN Scanner

जा रही थी। स्त्रियों के लिए शिक्षा का मुख्य उद्देश्य घर–गृहस्थी को कुशलता–पूर्वक चला लेने के साथ ही बच्चों का उचित तरीके से पालन–पोषण तथा एक आदर्श भारतीय समाज के निर्माण में सहयोग प्रदान करना था। चाँद पत्रिका के सम्पादक रामरख सहगल नवम्बर 1924 के अपने सम्पादकीय में लिखते हैं– "अपने गृह को सुन्दर एवं परिष्कृत करने के लिए उसे विज्ञान के ज्ञान की आवश्यकता है, किस प्रकार घर का विभाजन करें, कहाँ हो शयनागार और कहाँ हो पाकशाला, किस प्रकार पदार्थों को श्रेणीबद्ध करें इत्यादि विषयों का वैज्ञानिक ज्ञान हुए बिना वह अपने घर को ठीक–ठीक नहीं रख सकती है, घर का हिसाब–किताब होता है, धोबी को कपडे देना है, मजदूरनी को मजदूरी चुकाना है, नित्य का हिसाब रखना, इसके लिए उसे गणित जानने की आवश्यकता है। अपने देश और समाज के महत्व को पहचानने के लिए तथा अपने हृदय की प्रवृत्ति के सुन्दर विकास के लिए उसे अपने देश के साहित्य को पढ़ने की परम आवश्यकता है। गृहस्थाश्रम को मधुर और आनंदमय बनाने के लिए उसे संगीत में, घर की सुन्दर सजावट के लिए चित्रकला में, अपने खाली समय के उचित उपयोग के लिए काढ़ने, सीने, पिरोने में तथा और अनेक ललित कलाओं में कुशलता प्राप्त करना भी उसके लिए परम आवश्यक है। उसे एक दिन माता बनना है, इसलिए शिशु के जनन, पालन तथा रक्षण को बताने वाली धातृ शिक्षा तो उसके लिए अनिवार्य है।"[9]

इस तरह के विचारों से हम यह समझ सकते हैं कि उस समय तक स्त्री शिक्षा एक जरूरी मसला बन चुका था और किसी के लिए भी इसे नजरअंदाज कर पाना संभव नहीं था किन्तु इसका मुख्य उद्देश्य स्त्री को आत्मनिर्भर बनाने की कोशिशों से जुड़ा हुआ नहीं था। इसके पीछे भारतीय समाज की बुराइयों को दूर करना तथा उसे गौरवशाली बनाकर प्रस्तुत करना एक बड़ा कारण था। अंग्रजों के आने के बाद से यह बात हमेशा से उठती रही थी कि भारतीय इस मामले में पिछड़े हुए हैं कि उन्होंने अपनी महिलाओं को शिक्षा के प्रकाश से दूर रखा है। चाँद पत्रिका में लिखे जाने वाले अनेक आलेख इस बात की पुष्टि करते हैं कि उस समय तक भारतीयों के सामने दोहरी चुनौती थी– अपनी बालिकाओं को शिक्षित भी बनाना था और पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से बचाना भी था। इसकी पुष्टि इन उदाहरणों के माध्यम से हो सकती है – श्रीमती सरलाबाई जी नायक एम.ए. नाम की एक महिला लिखती हैं– "आज कल की लड़कियाँ जो मिशनरी स्कूलों में पढ़ती हैं फैशन की गुलाम होती हैं, समाज की चिरस्थाई मर्यादा का अपमान करती हैं और बड़े–बूढों की कोई इज्जत नहीं करती। इनके हृदय में श्रद्धा का लेश भी नहीं होता। इनके जीवन का न तो कोई उद्देश्य ही दिखलाई देता है। "[10]

इसी तरह से श्री पद्मवती कुमारी जी लिखती हैं– "प्रिय पाठकों हमारा अभिप्राय कदापि यह नहीं है कि स्त्रियाँ भी पुरुषों के सामान एम.ए. वा बी.एल. पास करके कौंसिलों में बहस करें व देश–विदेश की यात्रा करके लज्जा को तिलांजलि दे दें। मेरे कहने का अभिप्राय केवल यही है कि जिस प्रकार पुरुष बाहरी बातों पर विचार करते हैं तथा

Scanned with OKEN Scanner

धनोपार्जन करके उसकी रक्षा करते हैं उसी प्रकार स्त्रियाँ भी सब गृह सम्बन्धी कार्यों का सुविचार तथा उसका सुप्रबंध करती हैं। जब तक स्त्रियाँ शिक्षिता न होंगी तब तक वे अच्छी–अच्छी बातें कैसे विचार सकेंगी ?"[11]

आधुनिक शिक्षा प्रणाली की आलोचना करती हुई श्रीमती रमाजी बाई धर्मपत्नी मि. मेहरचंदजी लिखती हैं "आधुनिक शिक्षा प्रणाली से तो हम आर्य देवियों के उस उच्च आदर्श से अभी तक वंचित हैं जिस आदर्श को शास्त्रों ने हमारे लिए नियत किया है। प्यारी बहनों बड़े शोक का विषय है कि आजकल हम लोगों के हृदयों में से प्राचीन सभ्यता का सर्वथा ही लोप हो गया है, महाराणी सीता जी तथा सावित्री आदि की जीवनियों से हम कुछ शिक्षा ग्रहण नहीं करती। पाश्चात्य सभ्यता की इतनी प्रधानता हमारे मनों में पाई जाती हैं कि उसी को सब सुख सम्पत्ति का उपाय समझ रहे हैं, परन्तु याद रखिये कि पाश्चात्य सभ्यता तथा हमारी सभ्यता में जमीन–आसमान का अंतर है। पाश्चात्य सभ्यता हमें शारीरिक सुख भोग तथा विषय विलासिता की ओर ले जाती है परन्तु हमारी सभ्यता हमें मानसिक शांति तथा ईश्वर पारायणता सिखला कर परमानन्द की उपलब्धि करवाती है।"[12] आगे वे कहती हैं कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो स्त्री को गृह कार्यों में कुशल बनाने के साथ–साथ संतान पालन में सहयोग कर सके।

इन सब बातों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि नवजागरण के दौरान स्त्री–प्रश्न प्रमुखता से चिंतन के केंद्र में आये जरूर लेकिन उनके पीछे जो दृष्टि थी वह स्त्री को आत्मनिर्भर बनाने की नहीं अपितु भारतीय समाज में कुछ सुधार से जुड़ी हुई थी। इसके साथ ही विचारकों को इस बात का भी डर था कि कहीं ऐसा न हो कि स्वतंत्र स्त्री अपने अधिकारों के लिए उठ खड़ी हो इसलिए उसे बार–बार पतिव्रत धर्म की याद दिलाई जाती थी। जिस समाज में स्त्री की वर्जिनटी को लेकर आज तक सवाल खड़े किये जाते हों वहाँ किस तरह के विधवा–विवाह हुए होंगे, इसकी हम सहज कल्पना कर सकते हैं। पहले तो उन विधवाओं के विवाह को ही मान्यता दी गई जिनका उनके पति से कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं हुआ था। अगर इसके अतिरिक्त किसी विधवा का विवाह हुआ भी तो ज्यादातर मामलों में पति की उम्र उसकी उम्र से बहुत ज्यादा होती थी। यह बात भी सत्य है कि जिन विधवाओं ने पुनर्विवाह किया समाज उन्हें बहुत अच्छी नजरों से नहीं देखता था। स्त्री–शिक्षा की बात तो की गई लेकिन यह शिक्षा गृहस्थ–धर्म के समुचित पालन के लिए दी जाने वाली थी। इक्का–दुक्का उदाहरण ऐसे देखे जा सकते हैं जिनमें महिलाएँ पढ़–लिख कर अपने पैरों पर खड़ी हुईं। हिंदी नवजागरण का यह अंतर्विरोध इतना बड़ा था कि हिंदी समाज पर आज भी इसका प्रभाव देखा जा सकता है। एक पुत्र की लालसा में कितनी भ्रूण हत्यायें हो जाती हैं कहना मुश्किल है।

Scanned with OKEN Scanner

सन्दर्भ

1. सिंह, सुधा : स्त्री सन्दर्भ में महादेवी, प्रथम संस्करण, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली 2017 पृष्ठ संख्या–10
2. सेंटर फॉर वूमन स डेवेलपमेंट स्टडीस : चाँद संकलन–1922–1931 विधवा प्रश्न, बाल विवाह, प्रथम संस्करण– नयी किताब प्रकाशन दिल्ली 2021 पृष्ठ संख्या–59
3. वही, पृष्ठ संख्या–94
4. वही, पृष्ठ संख्या–28
5. वही, पृष्ठ संख्या–29
6. वही, पृष्ठ संख्या–120
7. तलवार, वीरभारत : रस्साकशी, प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 2017 पृष्ठ संख्या–34
8. वही, पृष्ठ संख्या–35
9. सेंटर फॉर वूमन स डेवेलपमेंट स्टडीस : चाँद संकलन–1922–1931 स्त्री शिक्षा, प्रथम संस्करण, नयी किताब प्रकाशन 2021 पृष्ठ संख्या–53
10. वही, पृष्ठ संख्या–93
11. वही, पृष्ठ संख्या–100
12. वही, पृष्ठ संख्या–103

◆◆◆

Scanned with OKEN Scanner